International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 109-112

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 109-112
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-03-2016
Accepted: 12-04-2016

अवधेश कुमार मिश्र
व्याख्याता (साहित्य), राजकीय विट्ठलनाथ सदाशिव पाठक आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, कोटा, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
अवधेश कुमार मिश्र
व्याख्याता (साहित्य), राजकीय विट्ठलनाथ सदाशिव पाठक आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, कोटा, राजस्थान, भारत

सौन्दर्यलीलामृतम् काव्य में सौन्दर्य विभावना

अवधेश कुमार मिश्र

सारांश
सौन्दर्य चर्मराग नहीं है, ना ही यह अंगनाओं के अंग भंगिमाओं का लावण्य है। सौन्दर्य की भारतीय दृष्टि को दिखाते हुए सौन्दर्य की विभावना की गई है। सौन्दर्यलीलामृतम् काव्य में यह काव्य राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर से प्रकाशित 'काव्यमंजूषा' में संकलित यह खण्डकाव्य पं. रामदवे की प्रथम कृति है। कवि ने इस खण्डकाव्य की रचना सन् 1949 में मुम्बई प्रवास के समय की थी। इस काव्य में 143 श्लोक है। कवि ने इस काव्य में सौन्दर्य का सत्य शिव रुप प्रस्तुत किया है। काव्य का कथानक मुम्बई की चौपाटी से लिया है।

कूटशब्द: सौन्दर्य, लावण्य, प्रवास, सत्य, शिव।

प्रस्तावना

अस्मिन् मोहमयी विशाल नगरी गर्भे कुतो विश्रमः,
लीना प्रस्थ विचिन्तने तु कविता सम्भावनाऽप्यात्मनः।
विश्रान्त्यै मनसः पयोधि पुलिने प्राप्तो मनागेकदाः,
दृष्टं तत्र रसान्वितं कविह्रदा यत्तन्मया वर्णितम्।।[1]

राष्ट्र विभाजन की त्रासदी से संत्रस्त, योगक्षेम की चिन्ता करते हुये परिवार पालन हेतु अपेक्षित वित्तार्जन–अभ्येषणा की गवेषणा में कवि पं. श्रीराम दवे का पदार्पण करॉंची से राजस्थान होते हुये मोहमयी नगरी (बम्बई) में होता है।
जहाँ संस्कृतशिक्षक के पद पर कार्य करते हुये उपार्जित वेतनादि से सश्रम जीवन निर्वाह करने लगते है। बम्बई की आवास समस्या सर्वविदित है, अतः कवि एक ही लघु आवास में चार पाँच समवयस्क मित्रों के साथ निवास करते हुये, दैनन्दिनी सेवा आदि कार्य निष्पादन के उपरान्त सान्ध्यबेला में रसिकमित्रों के साथ भ्रमणार्थं चौपाटी पर चले जाया करते थे।
जहाँ अनिन्द्य सुन्दरियों का सौन्दर्य, ललित ललनाओं का लावण्य तथा मोहमयी नगरी की मोहनियों के माधूर्य की मधूरिमा को स्वचित्त में स्थापित कर अपने सौन्दर्य बोध को 'विबुधविप्र'[2] की तरह कविता वनिता में समाहित करते हुये मानव ह्रदय में बसने वाले बहुतेरे भावों को कल्पना की कलम से ''सौन्दर्य लीलामृतम्'' नामक खण्ड काव्य की सर्जना की।
कवि ने यह खण्ड काव्य 1949 ई. में लिखा था, कवि को काव्य लेखन की प्रेरणा ''चौपाटी'' के चटपटी दृश्यों से, तथा जलधि–तटस्थित लावण्य–लीलास्थली पर मनसिज विलास समरांगण में स्वच्छन्द विहारिणी मनोहारिणी सरसा अपसरा की तरह, मानो विश्वसौन्दर्य सम्मेलन में, सौन्दर्य की लीला करती हुयी, ललित–लावण्य के वैभव से युक्त ललनाओं के चतुर्विध अभिनय लीलाओं से मिली थी। उसी बीज से सौन्दर्य समुपासक तथा लावण्य–वाटिका–चंचरीक युवा कवि ने 'सौन्दर्यलीलामृतम्' रुपी कचनार वृक्ष को स्थापित किया।
काव्य का कथानक, सौन्दर्य पिपासुओं की पिपासा को संतृप्त कर सकेगा एतदर्थ कथानक प्रस्तुत है –

सौन्दर्यं शिवसत्य भाव सुभगं यत्कल्पितं सूरिभिः,
जातं तन्नवजात दूषितधियां दुर्बोध नैर्गहितम्।
ये नैषा वितताऽपकीर्ति लघुता श्रृंगार भावेऽधुना,
सानोसंलभतां कदापि ललिते! काव्ये पदे मामकं।।[3]

ऋषि महर्षियों ने जिस सौन्दर्य को शिव और सत्य के साथ जोड़ा था, वह नवजात मतिकों के कुतर्क से निन्दित हो गया, जिसके कारण इस सौन्दर्य के श्रृंगार भाव में अपकीर्ति की लघुता फैल गयी है।

आज सारा संसार सौन्दर्य की खोज में उत्कण्ठित दिखाई पड़ता है। वयोवृद्ध राष्ट्र के नेता भी सुन्दरता की प्रतियोगिता में जो सुन्दरी निर्धारित मानदण्डों में खरी उतरती है, उसे ही विश्व सुन्दरी का सम्मान प्रदान करते है।

सौन्दर्य परीक्षकों द्वारा भी केशविन्यास, गौरगण्डस्थल, विम्बाधर, कुङ्मलवत्– कुचमण्डल, पीननितम्ब आदि को ही सौन्दर्य का मानदण्ड मान, सुन्दरियों का सम्मान करते है। सुन्दरी की सुषमासुधा के कण पर सारी प्रकृति मुग्ध दिखाई पड़ती है। वहीं काव्य अनुपम यशस्वी गिना जाता है, जिसमें सुन्दरी के सौन्दर्य का गुणगान किया गया हो।

नाटक भी उसकी विलास लीला से ही रुचिकर लगता है, गीत भी वहीं मधुर लगता है, जो उसके कण्ठ से निकलता हो। वस्तुतः वे सारी कलाऐं निरर्थक सी लगती है जिसमें सौन्दर्य का संयोग सम्मिलित न हुआ हो।

कला–कुशल–शिल्पकार द्वारा सजाई गयी शिल्पकला हो अथवा चतुर चित्रकारों की चित्रकला तब तक नयनाभिराम नहीं होती है, जब तक उसमें किसी ललना का विलास विलसित न हो। वस्तुतः सौन्दर्य ही सत्य है, शिव है, तथा संसार का सार है। जब से वासनात्मक लोगों ने इस सौन्दर्य मन्दिर में प्रवेश किया है, तब से इन सौन्दर्योपासक भक्तों की कीर्ति को बड़ा आघात लगा है।

कविता–वनिता–बिहारी कवि ने सांध्य बेला में, मुम्बई की समृद्धि का मुकुर, प्रसिद्ध कामिनी–केलिप्रांगण ''चौपाटी'' स्थित ललनानिष्ठ सौन्दर्य का वर्णन करते हुये कहते है कि मानो देश–विदेश की तरुणियाँ इस लावण्यमयी पण्यस्थल पर श्रृंगारोत्सव मनाने आयी हों, जिन्हें देखकर वीततारुण्य वृद्ध भी सहसा तारुण्य का अनुभव करने लगते है। वीर पुरुषों का धैर्य विचलित होने लगता है, संयमी पुरुषों का पौरुष विगलित होने लगता है, मानों स्वर्ग की अप्सरायें सौन्दर्य वैभव लुटाने धरती पर उतर आयी हों।

वे यौवन–दैदिप्यमान वदना, स्निग्ध केशालंकृता, उन्नत कन्दुकों को कौशेय कंचुकों में छिपायी हुयी, कमनीय–कन्धों पर उत्तरीय लटकायी हुयी, समुद्र तट पर विचरण करती हुयी, चन्द्रिका की तरह युवक चकोरों का चित्त चुराती हुयी, नेत्र में कृष्ण उपनेत्र हाथ में आतपत्र, कन्धे पर स्यूत (पर्श) लटकायी हुयी, अनावृत कटि को मटकती हुयी, मन ही मन गुनगुनाती हुयी पालित पिल्ले के डोर को थामी हुयी, चंचला अपनी चंचल दृष्टि से दर्शकों के मन को पुरजोर झंकृत करती हुयी, उन्मुक्त गगन के विमुक्त वातावरण में स्वच्छन्द विचरण करती हुयी समुद्रतटीय सुरम्य सान्ध्य को अभिराम बना रही थी।

कहीं भ्रमणशील युवतियों के अभितः पारितः युवक भ्रमरों का गुंजार तो कहीं नितान्त एकान्त में आलम्बनों का उद्दीपन, कहीं जननी द्वारा स्त्री मर्यादा का संदेश, तो कहीं उद्वाह धर्मपालना के संकेत का सम्प्रेषण, कहीं ''करबन्धने विपदा आमंत्रणम्''[4] का चिन्तन, तो कहीं सौम्य वेशधारिणी भारतीय महिलाओं द्वारा अर्णव अर्चन, इस प्रकार धीवरकन्या, भिक्षुकयुवतियों, उन्मुक्तकामा फिरंगीवामा आदि के सौन्दर्य समागम से यह विशाल नगरी मोहमयी मोहनीबाला की तरह आगन्तुकों को मुग्ध कर रही थी। वहीं एक ओर सौन्दर्य सागर के किनारे बैठी पर्वतीया कुमारी बालु के ढेर पर, अपने हाथ में अपनी ठोढ़ी रखे, मौन टकटकी लगाये अरुणवदना तरुणी के पास कोई युवक आकर अपने नयनों की वाणी से

कहने लगा कि हे सुन्दरि! मौनावस्थित तुम्हें देखकर मेरे हृदय में कई संदेह उत्पन्न हो रहे है, तुम रुष्ट हो या तुष्ट ये मौन भंग होने पर ही हमारी उत्कण्ठा को शान्त करेगा।

दूसरी ओर महानगरी में अभिसारिकायें भी कई रंग दिखाती है। वे अपने बिखरे वालों को संवारती हुयी, गरम सांसों को उगलती हुयी, शिथिल साटिका को कटितट पर दृढ़ करती हुयी, अपने विट सहचर को एकान्त में मिलने का सन्देश भेजकर अपनी तीव्र गतिका कार से अभिसार हेतु अभिष्ट स्थान पर जा रही अभिसारिकायें एकान्त में कान्त का साक्षात्कार प्राप्त कर आकाशीय बिजली के समान ऐसे ओझल होती है, मानों निर्द्वन्द–द्वन्द को रात्रि का प्रसाद मिल गया हो। इधर कोई प्यासा मधुप, संयोगवश प्रणय बन्धन में बाधा आ जाने पर निराशा लिये एकान्त में समुद्र की धूल मसलता हुआ, पूर्वघटित प्रणय प्रसंगों को याद करता हुआ, इस स्थिति के लिये विधाता को कोसता हुआ बैठा हुआ है।

उधर कोई प्रणय वंचिता कृशांगी अपने प्रणय योग सूत्र के खण्डित हो जाने पर खिन्न मना होकर चिर संचित संवेदना को आँखों से धो रही है।

अहोविचित्रः खलुरागबन्धः, जातः सकृन्नो विजहाति भूमिम्।
वहन्यजस्त्रं भूवितस्य धारा, पयोधिरुपं भजतेऽत्र चित्रम्।।[5]

प्रेम का बन्धन भी विचित्र होता है, एक बार हो जाने पर वह उस स्थान को नहीं छोड़ता है। मानो बहती हुयी प्रेमधारा ने पृथ्वी पर सागर का रुप धारण कर लिया हो, बम्बई का यह सागर जन सामान्यों के लिये भले ही लवण युक्त हों, किन्तु लावण्यमयी ललनाओं के लिये यह, प्रेममाधूर्य सागर है। इसी सागर के किनारे वैराग्य संवेदना की झलक भी दिखाई देती है। मुण्डित केशों वाले साधु समुद्र के गाम्भीर्य पर दृष्टि डालें, भोग विलास के सुख को अस्थिर मानकर, अपने पास बैठे हुये नवदीक्षित वृद्धों को सौन्दर्य की सत्यता के आलोक में भोगवती संस्कृति के दुषित दृष्टिवालों को सम्बोधित करते हुये कहते है कि ये मूढ़ लोग इन सुन्दर ललनाओं के भोग के पीछे भाग रहे है, ये वित्तविमूढ़मति कामान्धयुवक इतने धृष्ट है कि मुग्ध भौरों की तरह युवतियों के तीखे कटाक्ष वाणों से धायल होने पर भी कमलनियों का पीछा नहीं छोड़ते। ये लोग जिस स्तन का अमृतपान कर अपने तन को अद्यतन सनातन सत्य मानते आ रहे है। उसी स्तन को दुषित दृष्टि से देखते है। ये लोग नश्वर विलास में मन को डुबोकर प्रेम को भूल गये है।

एभिर्मोहमयी विलासनगरी भोगाश्रया भाव्यते,
नैषा काम कलाप लोडित धियां बोधाश्रमे विश्रमः।
पीत्वायस्य पयोऽमृतं तनुरियं तारुण्यमालम्बते,
वीक्षन्तेऽत्र तमेवदूषित दृशा वक्षोजमेते जड़ा।।[6]

ये लोग मन्मथ–वाटिका–वनिता की नाभि में रमण करते हुये पद्मनाभ की पूजा भूल गये है। वंशी की ध्वनि पर मोहित हरिण की तरह उस मधुर ध्वनि के पीछे तो भागते रहें किन्तु वंधीधर को भूल गये। जीवन के लिये व्याध के सामने गये, किन्तु मृत्युंजय को नहीं पहचान पाये।

''व्याधं धावसि जीवनाय कुमते! मृत्युंजयं नेक्षसे''[7]

इस प्रकार शब्दब्रह्म के रससागर में निकली सुधा के लेप से शोभायमान चौपाटी के किनारे विचरण करती हुयी वनिताओं के सौन्दर्य से मण्डित, रसिकों के संगम और वियोगियों की वेदना से वेष्टित एवं अन्त में वैराग्योदित ज्ञान से विराजित यह सौन्दर्यलीलामृतं है।

'सुन्दुं राति इति सुन्दरं तस्य भावः सौन्दर्यम्'

सौन्दर्य ईश्वरप्रदत्त एक अनुपम अलंकरण है, जिसे देख दृष्टा अपूर्व आनन्दानुभव करता है। गोचर सौन्दर्य अपने मूल रुप में परब्रह्म के अखण्डसौन्दर्य का ही सहोदर है, वह आत्मनिष्ठ होता है, उसकी अनुभूति मानसिक और आनन्ददायी होती है। यही आनन्द सहृदयों के हृदय में जब रस का रुप धारण कर लेता है, तो रसराज श्रृंगार के नाम से जाना जाता है।

श्रृंगार रस से श्रृंगारित कवि की कमनीय कृति 'सौन्दर्यलीलामृतं' है। जिसके अन्तर्गत मोहमयी नगरी (मुम्बई) की चारु चौपाटी पर ललित–लावण्य–वैभवा ललनाओं की सौन्दर्यलीला तथा सौन्दर्यान्वेषी युवकों की उत्कण्ठा परक क्रिया–कलापों का सुन्दर चित्रण है। यह कृति कवि की प्रथम कृति है, जिसकी रचना उन्होंने 1949 में बम्बई में रहते हुये की थी।

युवा कवि अपने समवयस्क मित्रों के साथ सायंकालीन भ्रमण के निमित्त समुद्रतट स्थित 'चौपाटी' पर जाया करते थे, जहाँ भिन्न–भिन्न प्रान्तों एवं देशों के युवक–युवतियाँ उनमुक्त भाव से अभिसार किया करते थे। कवि के एक मित्र रसिक प्रवृत्ति के थे, जो वहाँ के दृश्यों को रसिक भाव से देखा करते थे और अपने मनोभावों को कवि से साझा करते थे। कविहृदय पं. दवे ने वहाँ के मनोरम दृश्यों को उनकी आधुनिकता को तथा कुत्सित सौन्दर्य भावना को कल्पना के साथ संयुक्त कर काव्यबद्ध कर दिया। सौन्दर्यविभावना, सौन्दर्यलीला, मौनामृतम्, अभिसारिका, विवशाःविरहिणः, वैराग्यसंवेदना उक्त छः भागों में विभक्त 143 श्लोकात्मक इस खण्डकाव्य में श्रृंगार रस के दोनों पक्षों का मनोहारी चित्रण प्राप्त होता है।

सौन्दर्य के उपासक कवि ने उस सौन्दर्यस्थली को विश्वसुन्दरी प्रतियोगितास्थल उद्भावित करते हुये, भ्रमणार्थ आये हुये आगन्तुकों को सौन्दर्य की खोज में उत्कण्ठित व्यक्ति के रुप में वर्णित किया है। वहीं नारी नरव–शिख सौन्दर्य का चित्र उपस्थापित करते हुये उनकी भाव भंगिमा का ऐसा दृश्य दिखाया है, मानो युवक संसर्गाभिलाषी कोई चपला समुद्रतट पर भ्रमणमान युवकों को तृषित नेत्रों से निहार रही हो। इन वर्णनों में श्रृंगार रस की उत्तम अभिव्यक्ति हो रही है।

काचिद् वै प्रेम वार्ताऽध्ययन रतिकथोद्दीपिता नंगभावा,
तारुणोन्मत्तचिता युवक जन रसोत्कण्ठिता चंचलांगी।
हस्ताभ्यां वीजयन्ती कठिन कुचयुगं सान्त्वयन्तीव मारम्।
तीरस्थान यूना एषा स्मर तृषितदृशा वीक्षते वैजयन्ती।।[8]

सान्ध्यवेला में प्रेम कथाओं के अध्ययन से कामोद्दीप्त हुयी यौवन से उन्मत्त मतिवाली, युवक–संसर्गतृषिता कोई चपलता युवती हाथ पंखे से कठिन स्तनयुगल की उष्णता को शान्त करती हुई सी अपनी प्रदीप्त स्मराग्नि को मानो पुनः प्रज्ज्वलित करती हुयी सी इस समुद्र तट पर भ्रमण कर रही है और यहाँ पर टहलते हुये युवकों को तृषित नयनों से निहार रही है।

यहाँ नायक–नायिका विषयक रति 'स्थायीभाव' है, कश्चिद् युवती आलम्बन विभाव है। समुद्र तट का उन्मत्त वातावरण 'उद्दीपनविभाव' है। हाथों से हवा करती हुयी, स्तनयुगल की उष्णता को शान्त करने की चेष्टाविशेष द्वारा तृषित नयनों से युवकों को निहारना अनुभाव है।

औत्सुक्य, तृषा आदि संचारीभाव है। इस प्रकार उक्त श्लोक में विभावानुभाव संचारी के संयोग से सहृदयों के हृदय में स्थित भाव की अनुरागात्मक परिणिती रुप श्रृंगाररस है।

दृष्ट्वाऽभीष्टं सहचर वरं लग्नमन्यप्रसंगे,
काचित तन्वी गमन मतिका दूरमेकान्त देशम्।
कृत्वा किंचिन्निषमिह दृशा दत्त संकेत भावा,
यूना सार्धं व्रजतिमिषतो वंचयन्ती वयस्यान्।।[9]

कवि ने सौन्दर्यलीला में लग्न ललना की अन्तर्दशाओं को सूक्ष्मता से प्रतिपादन करते हुये, तरुणी का अपने अभीष्ट तरुण के साथ एकान्त में मिलने की उत्कण्ठा लिए, कोई बहाना बनाकर अपने साथ चल रहे साथियों को वंचिका देकर, संकेतानुसार चलते हुये इष्टप्राप्ति हेतु अभीष्टमित्र के साथ हो जाती है। यहाँ अभीष्ट तरुण समागम की अभिलाषा से नायिका के हृदय में 'रतिभाव' का बीज अंकुरित होता है। साहचर्य पाकर नायक भी अनुरक्त होता है। एकान्त स्थान दोनों को उद्दीप्त करता है, अनुगमन आदि चेष्टा तथा उत्कण्ठा, हर्ष के द्वारा संयोग को पुष्ट करता है।

काव्य परम्परा में प्रचलित नख–शिख आदि वर्णन के साथ ही श्रृंगार रस को उद्दीप्त करने वाले नयन, नाभि, त्रिवलि, उरज आदि अंग–प्रत्यंगों का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु आधुनिक संस्कृत साहित्य के कवि पं. दवे ने ''सौन्दर्यलीलामृतम्'' में आधुनिक परिधान, सज्जोसामान से सुसज्जित अंग प्रत्यंगों का झलक दिखाते हुये श्रृंगार रस की अनेक अवस्थाओं का सुरम्य उद्घाटन किया है जो अधोलिखित श्लोकों में दृष्ट्व्य है –

मंजिष्ठरागांचित हस्तिदन्त खणच्चलत्सद् वलयाभिरामा।
स्वर्णांगदा भासित बाहुसन्धिः नग्नोदरा याति च कान्त मग्ना।।[10]

सूक्ष्मावगुण्ठोल्लसदम्बुजाक्षी, स्मितोलसद्दाडिमबीजदन्ता।
कांची क्वणन्तीषति कापि कान्ता, रसालवक्षोजभराव नम्रा।।[11]

मदोन्मदायाः कमलाननायाः, गौरे कपोलेऽस्ति च दारुचिन्हम्।
घनालकैः संवृत चारुवक्त्रम्, तिरस्करोतीन्दुमिवाभ्रवृत्तम्।।[12]

स्मराजिराच्छादन मात्र कच्छा, स्तनोद्धति स्तम्भनबद्धवेष्टा।
असंवृतांगैः सलिलं धुनन्ती, सोद्वेलयत्यम्बुधि धैर्यबन्धम्।।[13]

अर्थात् नग्नोदरा नागरी अपने कान्त की स्मृति में मग्न होकर कमल–नेत्रों तथा दाडिम–दशनों से सुशोभित, रसाल स्तन भार में झुकी हुयी, तिल युक्त गौरकपोल एवं सघन बालों से आच्छादित कामिनी–कान्त अवलोकन, आलिगंन, उपभोगात्मक इष्टपूर्ति रुप संभोग श्रृंगार का मनोहारि वर्णन किया गया है। इस प्रकार सौन्दर्य की नगरी, सूर्य–चन्द्र मिलन की वेला, अभिनवयौवन, यौवनतरंग को झंकृत करने वाला समुद्र का तरल तट, चौपाटी की चटपटी चेष्टायें, कामोद्रेक, परस्पर दर्शन–स्पर्शन आदि की वर्णना द्वारा ''जलकेलिवनविहार''[14] के अतिरिक्त चौपाटी–विहार की नवीन उद्भावना करते हुये वहाँ के क्रिया कलापों में सम्भोग श्रृंगार की सज्जा सुसज्जित कर कवि ने अपनी शैंगारिक शक्ति को प्रदर्शित किया है।

सौन्दर्यलीलामृतम् के 'विवशाःविरहिणः' भाग में विप्रलम्भ श्रृंगार का हृदयहारी वर्णन प्राप्त होता है। कोई प्यासा मधुप प्रिया के साथ पूर्व में घटित अपने प्रयण–प्रसगों को याद करता हुआ विधाता को कोस रहा है, तो कोई प्रणय वंचिता कृशांगी अपने प्रणयी के सुदूर चले जाने पर खिन्न मन से पूर्व प्रणय–प्रसंगों का स्मरण करती हुयी अपने को ही अपने हृदय की पीड़ा सुना रही है।

काचित्तन्वी प्रणय सुभगे खण्डिते योग सूत्रे,
दूरंयाते प्रियतम जने संगमोत्सुक्यपूर्णान्।
प्रीत्युत्सेकान् हृदयजलधेर्वीचिभिर्भावयन्ती,
आत्मानं वै कथयति रुजं स्वात्मनो निश्वसन्ती।।[15]

करुण विप्रलम्भ की छटा प्रकट करते हुये, प्रिय दर्शन के सुखदायक क्षण पुनः इस जीवन आ पायेगें क्या ? क्या कभी उनकी मधुर ध्वनि सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो सकेगा –

नीतास्ते बहवो मनोद्रवकरा धन्याः प्रतीक्षाक्षणाः,
येष्वन्तर्वहति स्म कापि मधुरा संवेदना वाहिनी।
दिष्ट्या ते तडिदास्थिरं समभवत् पुण्येन सद्दर्शनम्,
हा हा! तन्नहि जीवने सुखमहो भूयः समायास्यति।।[16]

त्वंजानासि यदा मदीय मखिलं वृत्तं तदोक्तेन किम्,
चित्ते मे विरहानलो ज्वलनयं प्राणा अमी व्याकुलाः।
नायातः प्रिय! बोधितोऽपि नु वरम् तत् साम्प्रतं कथ्यताम्,
सो धन्यो मम जीवने ननु कदा भूयः समायास्यति।।[17]

उक्त श्लोकों में उत्कृष्ट अनुराग होते हुये भी प्रिय समागम नहीं हो रहा है। नायिका पूर्वराग का स्मरण कर रही है। प्रेमाश्रु से सने मन की चिरसंचित संवेदना को सुनाने का अवसर तलाशते हुये विरहानल से संतप्त हो रही है। प्राण व्याकुल हो रहे है। मिलन की वेला पुनः जीवन में कब आयेगी।

''आश्वस्तं कुरुते न कोऽपि हृदयं मेधोपदेशामृतैः''[18]

आश्वासन भरे उपदेशों की प्रतीक्षा में कालयापन कर रही है। इस प्रकार शृंगार रस की दोनों अवस्थाओं का मनोरम वर्णन से सौन्दर्यलीलामृतम् ग्रन्थ का आत्मस्थानी भाव प्रकट होता है। अतः शृंगाररस को इस खण्डकाव्य का अंगी रस कह सकते हैं –
अंगरस के रुप में इसी खण्डकाव्य के अन्तिम सोपान ''वैराग्यसंवेदना'' में शान्त रसाप्लावित पद्यों की प्राप्ति होती है। जहाँ श्वेतवस्त्रधारी साधु समुद्र के गाम्भीर्य पर दृष्टि डाले हुये वैराग्य भाव के कारण भोग विलासत्मक स्वभाव वाले व्यक्तियों को तथा नवदीक्षित वृद्धों को ज्ञानोपदेश दे रहे है –

कश्चिच्चात्र सिताम्बरा वृततनुर्लूनालकः श्रावकः,
वर्षीयान् विपणाधिपोऽपि जलधेर्गाम्भीर्य मुद्भावयन्।
मत्वा भोग विलास सौख्य चलतां वैरा०य भाग्योदयात्,
पार्श्वस्थं नवदीक्षितं हि जरठं ज्ञानं दिशन् तिष्ठति।।[19]

यहाँ रागद्वेष से रहित शम चित्तवृत्ति वाला श्रावक भोगविलास के सुख को अस्थिर बताता हुआ वैराग्य भाव से शाश्वत सत्य का ज्ञानोपदेश दे रहा है। जो शान्तरस की प्रकृति को परिपुष्ट करता है। क्योंकि जिस वर्ण्यविषय में सुख न हो, न दुःख हो, न कोई चिन्ता हो, न राग हो, न द्वेष हो और न कोई इच्छा ही शेष हो उसे मुनीजन शान्तरस कहते है।
इसका स्थायी भाव शम, आश्रम उत्तम पात्र, वर्ण कुन्द पुष्पवत् तथा चन्द्रादिवत् शुक्ल और देवता भगवान् लक्ष्मीनारायण है। अनियतत्व, दुःखमयत्व आदि रुप से सम्पूर्ण संसार की असारता का ज्ञान अथवा परमात्म स्वरुप आलम्बन–विभाव, ऋषियों के आश्रम, पवित्र तीर्थ, रमणीय एकान्त वन तथा महात्माओं का संसर्ग आदि उद्दीपनविभाव होता है। रोमा०च आदि इसके अनुभाव होते है। निर्वेद–हर्ष–स्मरण–मति–प्राणियों पर दया आदि संचारी भाव होते है।

न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता, न राग द्वेषो न च काचिदिच्छा।
रसः स शान्तः कथितो मुनीन्द्रैः, सर्वेषु भावेषु शम प्रधानः।

इस प्रकार कवि की इस प्रथम कृति में संयोग, वियोग और वैराग्य का समन्वय प्राप्त होता है।

सन्दर्भ

1. सौन्दर्यलीलामृतम् – पुरोवाक् – पृ.सं.–29
2. सौन्दर्यलीलामृतम – पुरोवाक् – पृ.सं.–28 कवयोविबुधा विप्राः प्रकृत्या सह योषिताम्। अंगानां धर्म सम्बन्धं कुर्वते साधुचेतसा।।
3. सौन्दर्यलीलामृतम – पृ.सं. 35, श्लोक – 3
4. सौन्दर्यलीलामृतम – पृ.सं. 44, श्लोक – 14
5. सौन्दर्यलीलामृतम – पृं. सं. 75, श्लोक – 35
6. सौन्दर्यलीलामृतम – पृ.सं. 76 श्लोक – 3
7. सौन्दर्यलीलामृतम – पृ.सं. 80 श्लोक – 12
8. सौन्दर्यलीलामृतम् – श्लोक सं.– 16
9. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं. – 17
10. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं. 29
11. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं.– 30
12. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं.– 34
13. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं.– 40
14. साहित्यदपर्ण – 3/212, तत्र स्यादृतुषटकं चन्द्रादित्यौ तथोदया स्तमयः। जल केलिवन विहार प्रभात मधुपान यामिनी प्रभृतिः।।
15. सौन्दर्यलीलामृतम् – विपथाः विरहिणः –श्लोक सं. – 2
16. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं. – 3
17. सौन्दर्यलीलामृतम – श्लोक सं. – 6
18. सौन्दर्यलीलामृतम – काव्यमंजूषा पृ. 70 – श्लोक 18
19. सौन्दर्यलीलामृतम – वैराग्यसंवेदना – श्लोक सं. – 1